**राजस्थान उच्च न्यायालय**
**जोधपुर**

एस.बी. आपराधिक विविध (याचिका) संख्या 261/2025

कमलेश सांखला पुत्र श्री अमर सिंह, उम्र लगभग 34 वर्ष, निवासी सांखला इलेक्ट्रिक शॉप के पास, मानसागर महामंदिर, जोधपुर।

----याचिकाकर्ता

बनाम

राजस्थान राज्य, पीपी के माध्यम से

----प्रतिवादी

| | | |
|---|---|---|
| याचिकाकर्ता के लिए | : | श्री मुक्तेश माहेश्वरी<br>श्री युवराज सिंह मेड़तिया |
| प्रतिवादी के लिए | : | श्री एन.एस. चंदावत, उप.जी.ए. |

**माननीय न्यायाधिपति श्रीमान् फरजंद अली**

**आदेश**

**रिपोर्टेबल**

**15/01/2025**

1. वर्तमान आपराधिक विविध याचिका दंड प्रक्रिया संहिता, 1973 की धारा 482 के अंतर्गत दायर की गई है, जिसमें आपराधिक पुनरीक्षण याचिका संख्या 64/2024 (सी.आई.एस. संख्या 66/2024) में विद्वान सत्र न्यायाधीश, चित्तौड़गढ़ द्वारा पारित आक्षेपित आदेश दिनांक 01.08.2024 को चुनौती दी गई है। उक्त आदेश के माध्यम से याचिकाकर्ता द्वारा विद्वान मुख्य न्यायिक मजिस्ट्रेट, जिला चित्तौड़गढ़ के प्रकरण

संख्या 1749/2023 में पारित आदेश दिनांक 29.08.2023 के विरुद्ध प्रस्तुत आपराधिक पुनरीक्षण याचिका को खारिज कर दिया गया था। याचिकाकर्ता का तर्क है कि विद्वान विचारण न्यायालय ने याचिकाकर्ता के विरुद्ध भा.द.स. की धारा 420 और 120 बी, आईटी अधिनियम की धारा 66 डी, और आरपीओ, 1949 की धारा 3/4 के तहत अपराधों के लिए गलत तरीके से संज्ञान लिया है।

2. इस याचिका को प्रस्तुत किए जाने के कारक तथ्य यह है कि दिनांक 12.06.2019 को लगभग सायं 5:30 बजे गश्त के दौरान थानाधिकारी शैलेंद्र सिंह और उनके दल को पंचायत समिति के सामने एक ठेले के पास खड़े एक व्यक्ति के बारे में सूचना प्राप्त हुई, जो अपने मोबाइल फोन के जरिए ऑनलाइन जुए में संलिप्त था। उक्त सूचना पर कार्रवाई करते हुए, कांस्टेबल पुष्पेंद्र सिंह ने सादे कपड़ों में उस व्यक्ति से संपर्क किया, जिसे बाद में याचिकाकर्ता नंबर 1 के रूप में पहचाना गया, और एक चिह्नित 500 रुपये के नोट का उपयोग करके गेम रिचार्ज के लिए लेनदेन किया। तदोपरांत, याचिकाकर्ता को पकड़ लिया गया और तलाशी लेने पर मोबाइल फोन, आईडी, पासवर्ड और बड़ी मात्रा में नकदी सहित कई आपत्तिजनक वस्तुएं जब्त की गईं। कोतवाली थाना, चित्तौड़गढ़ में एक प्रथम सूचना रिपोर्ट (एफआईआर) संख्या 256/19 दर्ज की गई। जांच के बाद, आरोप पत्र दाखिल किया गया और विचारण न्यायालय ने दिनांक 29.08.2023 को संज्ञान लिया। इससे व्यथित होकर, याचिकाकर्ता ने भारतीय नागरिक सुरक्षा संहिता, 2023 (जिसे आगे "बीएनएसएस" कहा जाएगा) की धारा 438 के तहत एक पुनरीक्षण याचिका दायर की, जो संख्या

64/2024 (सीआईएस संख्या 66/2024) के रूप में पंजीकृत हुई, जिसे दिनांक 01.08.2024 के आदेश के तहत, समय-बाधित होने के तकनीकी आधार पर विद्वान पुनरीक्षण न्यायालय द्वारा खारिज कर दिया गया।

3. याचिकाकर्ता ने तर्क दिया कि संज्ञान लेने में विचारण न्यायालय ने, और तत्पश्चात, समय-बाधित आधार पर पुनरीक्षण याचिका को खारिज करने में पुनरीक्षण न्यायालय ने, दोनों ने ही त्रुटि की है। याचिकाकर्ता ने दावा किया कि कोई अवैध जुआ नहीं हुआ था और पुलिस की कार्रवाई मोबाइल गेम की प्रकृति की गलत व्याख्या पर आधारित थी, जो कि केवल मनोरंजन का एक रूप था। इसके अतिरिक्त, याचिकाकर्ता ने तर्क दिया कि पुनरीक्षण न्यायालय ने मामले के गुण-दोषों की तुलना में प्रक्रियात्मक तकनीकी पहलुओं को प्राथमिकता देकर गलती की थी, खासकर पुनरीक्षण याचिका दायर करने में हुई देरी के लिए दिए गए स्पष्टीकरण को देखते हुए। अंत में, याचिकाकर्ता ने निर्दोषता की उपधारणा के सिद्धांत का हवाला दिया और इस बात पर ज़ोर दिया कि किसी निर्दोष व्यक्ति को दंडित नहीं किया जाना चाहिए।

4. दोनों पक्षों की ओर से उपस्थित अधिवक्ताओं को सुना गया तथा अभिलेख पर उपलब्ध सामग्री का अवलोकन किया गया।

5. वर्तमान याचिका के गुण-दोषों पर विचार करने से पहले, उस विधिक ढाँचे पर चर्चा करना उचित है जिसके अंतर्गत न्यायालय के पुनरीक्षण क्षेत्राधिकार का प्रयोग किया जाता है। बीएनएसएस, 2023 की धारा 438 (सीआरपीसी की धारा 397 के अनुरूप),

उच्च न्यायालय और सत्र न्यायालय को अभिलेखों को मँगवाने और अधीनस्थ न्यायालयों द्वारा पारित आदेशों को संशोधित करने की शक्तियों को रेखांकित करती है। यह प्रावधान यह सुनिश्चित करने में महत्वपूर्ण भूमिका निभाता है कि न केवल न्याय हो, बल्कि अधीनस्थ न्यायालयों में हुई किसी भी कानूनी या प्रक्रियात्मक त्रुटि को सुधारकर न्याय होता हुआ दिखाई भी दे। इस धारा के दायरे और अनुप्रयोग को पूर्णतः समझने के लिए, संदर्भ हेतु यहाँ पुनः प्रस्तुत करना आवश्यक है।

*438.* पुनरीक्षण की शक्तियों का प्रयोग करने के लिए अभिलेख मंगाना।

*(1)* उच्च न्यायालय या कोई सत्र न्यायाधीश अपनी स्थानीय अधिकारिता के भीतर स्थित किसी अवर दंड न्यायालय के समक्ष की किसी कार्यवाही के अभिलेख को, किसी अभिलिखित या पारित किए गए निष्कर्ष, दंडादेश या आदेश की शुद्धता, वैधता या औचित्य के बारे में और ऐसे अवर न्यायालय की किन्हीं कार्यवाहियों की नियमितता के बारे में अपना समाधान करने के प्रयोजन से, मंगा सकेगा और उसकी परीक्षा कर सकेगा और ऐसा अभिलेख मंगाने पर निर्देश दे सकेगा कि अभियुक्त की परीक्षा लंबित रहने तक किसी दोषसिद्धि या आदेश के निष्पादन को निलंबित किया जाए और यदि अभियुक्त परिवीक्षा में है तो उसे उसके बंधपत्र या जमानत पर छोड़ दिया जाए।

स्पष्टीकरण — सभी मजिस्ट्रेट, चाहे वे कार्यपालिका हों या न्यायिक, और चाहे वे आरंभिक अधिकारिता का प्रयोग कर रहे हों, या अपीलीय अधिकारिता का, इस उपधारा के और धारा *439* के प्रयोजनों के लिए सत्र न्यायाधीश से अवर समझे जाएंगे।

*(2)* उपधारा *(1)* द्वारा प्रदत्त पुनरीक्षण की शक्तियों का प्रयोग किसी अपील, जांच, विचारण या अन्य कार्यवाही में पारित किसी अंतरिम आदेश के संबंध में नहीं किया जाएगा।

*(3)* यदि किसी व्यक्ति द्वारा इस धारा के अधीन आवेदन या तो उच्च न्यायालय को या सत्र न्यायाधीश को किया गया है, तो उसी व्यक्ति द्वारा कोई अन्य आवेदन उनमें से दूसरे को ग्रहण नहीं किया जाएगा।

6. बीएनएसएस की धारा 438 के अंतर्गत उच्च न्यायालय और सत्र न्यायालय को प्रदत्त वैधानिक शक्तियों का उद्देश्य अधीनस्थ अदालतों द्वारा पारित आदेशों की वैधता, शुद्धता और औचित्य की जाँच करना हैं। यह सुनिश्चित करता है कि आपराधिक प्रक्रियाओं का कानून के अनुसार कड़ाई से पालन किया जाए, जिससे कानूनी आदेशों में किसी भी प्रकार के विचलन को रोका जा सके। वैधता में कानूनी प्रावधानों का सही अनुप्रयोग और व्याख्या शामिल है। यह अत्यंत महत्वपूर्ण है कि न्यायालय कानून को गलत न समझें या उसकी अनदेखी न करें, क्योंकि किसी भी गलत व्याख्या या त्रुटिपूर्ण अनुप्रयोग से गंभीर प्रक्रियात्मक त्रुटियाँ हो सकती हैं। शुद्धता में कानूनी प्रावधानों के अनुसार तथ्यों का उचित अनुप्रयोग शामिल है। सटीक कानूनी परिणाम सुनिश्चित करने के लिए यह आवश्यक है कि तथ्यात्मक निर्धारण शासी कानूनों के अनुरूप हों। औचित्य उन स्थितियों को संबोधित करता है जहाँ कानून और तथ्यों के सही अनुप्रयोग के बावजूद, परिणामी परिणाम त्रुटिपूर्ण होता है। ऐसा तब हो सकता है जब कानूनी शक्ति का प्रयोग तकनीकी रूप से सही हो और तथ्य निर्णय का समर्थन करते हों, लेकिन समग्र परिणाम न्याय के व्यापक अर्थों में अनुचित, पक्षपातपूर्ण या अन्यायपूर्ण माना जाए।

उदाहरण के लिए, यदि प्रति माह ₹100,000 कमाने वाले पति को अपनी पत्नी को भरण-पोषण के रूप में ₹2,000 देने का आदेश दिया जाता है, तो कानूनी शक्ति (वैधता) का प्रयोग किया गया है, और पत्नी की पात्रता (शुद्धता) पर विचार किया गया है, लेकिन पति की आय को देखते हुए भरण-पोषण की राशि उचित (औचित्य) नहीं है। इस संदर्भ में न्यायालय की शक्ति पर्यवेक्षी और निगरानी प्रकृति की है। इसका

उद्देश्य यह सुनिश्चित करना है कि कार्यवाही और आदेश कानून और न्याय के सिद्धांतों का पालन करें, जिससे मामलों का निष्पक्ष निपटारा हो सके। न्यायालयों की स्थापना इन्हीं उद्देश्यों को बनाए रखने के लिए की गई है, जो वैध प्रक्रियाओं के माध्यम से न्याय सुनिश्चित करते हैं। इस शक्ति को लागू करने का तरीका पक्षों द्वारा आवेदनों के माध्यम से हो सकता है, या जब न्यायालय को प्रकाशनों, शिकायतों या पत्रों के माध्यम से संभावित त्रुटियों के बारे में से अवगत कराया जाता है। ऐसी सूचना प्राप्त होने पर, न्यायालय को संबंधित आदेश की वैधता, शुद्धता और उपयुक्तता के संबंध में स्वयं को संतुष्ट करना होगा। इस स्तर पर, न्याय के अंतिम उद्देश्य को प्राप्त करने के लिए न्यायालय स्वप्रेरणा शक्ति का भी प्रयोग कर सकता है।

7. तात्कालिक मामले में, विद्वान सत्र न्यायाधीश ने याचिकाकर्ता के तर्कों के गुण-दोषों पर विचार करने की अपनी ज़िम्मेदारी का परित्याग कर, बीएनएसएस की धारा 438 के प्रावधानों को प्रभावी रूप से निरर्थक बना दिया है। उच्च न्यायालय, न्याय के अंतिम संरक्षक के रूप में, इस तरह के लापरवाह दृष्टिकोण को स्वीकार नहीं कर सकता। न्यायालय पर यह अनिवार्य दायित्व निहित है कि वह न्याय के सिद्धांतों का अनुपालन तथा नागरिकों के अधिकारों का संरक्षण सुनिश्चित करे।

8. बीएनएसएस, 2023 की धारा 438 की भाषा स्पष्ट रूप से "सकता है" शब्द का प्रयोग करती है, जिससे सत्र न्यायाधीश या उच्च न्यायालय को अपने अधिकार क्षेत्र में किसी अवर आपराधिक न्यायालय के समक्ष किसी भी कार्यवाही के रिकॉर्ड को मंगवाने

और उनकी जांच करने का विवेकाधीन शक्ति प्राप्त होती है। यह विवेकाधीन अधिकार, जिसे अक्सर पुनरीक्षण क्षेत्राधिकार कहा जाता है, का प्रयोग न्यायालय को ऐसे अवर न्यायालय द्वारा पारित किसी भी निष्कर्ष, सजा या आदेश की शुद्धता, वैधता या औचित्य के संबंध में संतुष्ट करने के लिए किया जाता है। यह समझना अनिवार्य है कि "सकता है" शब्द का प्रयोग यह दर्शाता है कि यह शक्ति बाध्यकारी नहीं है, बल्कि न्याय की आवश्यकताओं के अनुसार विवेकपूर्ण तरीके से प्रयोग की जानी है। इस शक्ति की विवेकाधीन प्रकृति इसके महत्व को कम नहीं करती है; बल्कि, यह इसके प्रयोग में एक सतर्क और विवेकपूर्ण दृष्टिकोण की आवश्यकता को रेखांकित करती है।

9. पुनरीक्षण क्षेत्राधिकार पर्यवेक्षी या निगरानी प्रकृति का होता है, जो उच्च न्यायपालिका को यह सुनिश्चित करने में सक्षम बनाता है कि अधीनस्थ न्यायालय कानून और न्याय की सीमाओं के भीतर कार्य करें। इस प्रावधान का सार अधीनस्थ स्तर पर न्यायिक प्रक्रिया में व्याप्त त्रुटियों, अनियमितताओं या अवैधताओं को सुधार कर न्याय की विफलता को रोकना है। यह पर्यवेक्षी भूमिका महत्वपूर्ण है, क्योंकि यह न्यायिक गलतियों को सुधारने के लिए एक तंत्र प्रदान करती है, जिससे न्यायिक प्रक्रिया की अखंडता बनी रहती है।

10. इस शक्ति का प्रयोग करते समय, न्यायालय *"*उबी जूस इबी रेमेडियम*" (ubi jus ibi remedium)* - जहाँ अधिकार है, वहाँ उपचार भी अवश्य होना चाहिए के सिद्धांत द्वारा निर्देशित होता है। यह सिद्धांत न्यायालय के उस कर्तव्य को रेखांकित करता है

जिसके तहत कानूनी अधिकारों का उल्लंघन होने पर उपचार प्रदान करना आवश्यक है। धारा 438 बीएनएसएस के अंतर्गत पुनरीक्षण शक्ति इसी सिद्धांत को समाहित करती है, यह सुनिश्चित करते हुए कि तकनीकी या प्रक्रियागत खामियों के कारण न्याय बाधित न हो।

11. इस शक्ति का प्रयोग करने का न्यायालय का विवेकाधिकार इस अर्थ में पूर्ण है कि न्याय के उद्देश्यों की पूर्ति सुनिश्चित करने के लिए जब भी आवश्यक हो इसका प्रयोग किया जा सकता है। हालाँकि, इस विवेकाधिकार का प्रयोग न्यायसंगत, समतापूर्ण और प्राकृतिक न्याय के सिद्धांतों के अनुरूप होना चाहिए। अभिलेख मँगवाने और आदेशों को संशोधित करने की शक्ति न्यायपालिका के हाथों में कानूनी कार्यवाही की पवित्रता बनाए रखने और प्रक्रिया के दुरुपयोग को रोकने के लिए एक शक्तिशाली उपकरण है।

12. इसके अतिरिक्त, हालाँकि यह प्रावधान विवेकाधिकार प्रदान करता है, लेकिन यह प्रत्येक मामले के तथ्यों और परिस्थितियों पर न्यायिक विवेक के गहन प्रयोग की माँग करता है। यह कोई यांत्रिक या नियमित प्रक्रिया नहीं है, बल्कि यह एक ऐसी प्रक्रिया है जिसके लिए मामले की विस्तृत और सूक्ष्म समझ की आवश्यकता होती है ताकि यह सुनिश्चित किया जा सके कि अधीनस्थ न्यायालय का आदेश वैधता, शुद्धता और औचित्य की कसौटी पर खरा उतरता है या नहीं।

13. इस प्रकार, धारा 438 बीएनएसएस द्वारा प्रदत्त न्यायिक विवेकाधिकार दोहरे उद्देश्य की पूर्ति करता है: यह न्यायिक त्रुटियों के विरुद्ध एक सुरक्षा कवच के रूप में और

विधि के शासन को बनाए रखने के लिए एक सुधारात्मक उपाय के रूप में कार्य करता है। इस विवेकाधिकार का प्रयोग करते समय पुनरीक्षण न्यायालय को त्रुटियों को सुधारने और न्यायिक कार्यवाही की अंतिमता का सम्मान करने के बीच एक सूक्ष्म संतुलन बनाना चाहिए, जिससे यह सुनिश्चित हो सके कि न्याय उसके वास्तविक अर्थों में प्रदान किया गया है। धारा 438 बीएनएसएस के तहत विवेकाधिकार आपराधिक न्याय प्रणाली का एक अनिवार्य पहलू है, जो उच्च न्यायालयों को न्यायिक प्रक्रियाओं की निगरानी और सुधार करने में सक्षम बनाता है, जिससे न्याय प्रणाली में जनता का विश्वास मज़बूत होता है। इस प्रावधान में प्रयुक्त शब्द "सकता है" इस शक्ति के सुविचारित और विवेकपूर्ण अनुप्रयोग को दर्शाता है, जो न्याय के प्रहरी के रूप में न्यायपालिका की भूमिका को रेखांकित करता है।

14. आक्षेपित आदेश में एक स्पष्ट गंभीर कमी है। विद्वान सत्र न्यायाधीश ने पुनरीक्षण याचिका के गुण-दोषों पर गहन विचार करने और याचिकाकर्ता द्वारा उठाए गए महत्वपूर्ण तर्कों पर निर्णय देने के बजाय, अस्पष्ट रूप से अपनी जाँच को विलम्ब क्षमा आवेदन के संकीर्ण दायरे तक ही सीमित रखा। प्रक्रियात्मक तकनीकी बारीकियों पर अत्यधिक ज़ोर देने वाला यह दृष्टिकोण न्यायिक कर्तव्य की घोर उपेक्षा का प्रतीक है। "नुला पोएना सिने लेगे" *(Nulla poena sine lege)* - बिना कानून के कोई दंड नहीं - यह माँग करता है कि न्यायालय किसी भी निष्कर्ष पर पहुँचने से पहले मूल मुद्दों की सावधानीपूर्वक जाँच करें। विद्वान सत्र न्यायाधीश ने प्रक्रियात्मक आधार पर पुनरीक्षण याचिका को समय से पहले खारिज करके,

याचिकाकर्ता को संज्ञान के आक्षेपित आदेश की वैधता और औचित्य को चुनौती देने का सार्थक अवसर देने से प्रभावी रूप से वंचित कर दिया। यह दृष्टिकोण न केवल प्राकृतिक न्याय के सिद्धांतों के विपरीत है, बल्कि न्यायिक प्रक्रिया के मूल सार का भी उल्लंघन करता है, जो मामले के सभी प्रासंगिक पहलुओं पर गहन और निष्पक्ष विचार-विमर्श का अधिदेश देता है।

15. जब कोई पक्षकार देरी से न्यायालय का रुख करता है, तो न्यायालय को यह निर्धारित करना चाहिए कि क्या देरी के कारण गलत आदेश को बरकरार रखा जा सकता है। केवल समय बीत जाने के कारण किसी दोषपूर्ण आदेश को बिना सुधारे रहने की अनुमति नहीं दी जानी चाहिए। न्यायालय की यह ज़िम्मेदारी है कि वह यह सुनिश्चित करे कि प्रक्रियागत विलंब के कारण न्याय से समझौता न हो। हालाँकि न्यायालय देरी के कारण हुई असुविधा के लिए पक्षों पर लागत या आर्थिक दंड लगा सकता है, लेकिन उसे यह भी सुनिश्चित करना चाहिए कि केवल चुनौती देने में हुई देरी के कारण गलत आदेश को बरकरार न रखा जाए। न्यायालय का मूल कर्तव्य न्यायिक प्रक्रिया की अखंडता को बनाए रखने के लिए ऐसी त्रुटियों को सुधारना है।

16. पुनरीक्षण याचिका दायर करने में देरी के मुद्दे को हल करने के लिए, परिसीमा अधिनियम, 1963 की धारा 5 को पुनः प्रस्तुत करना उचित है, जो पर्याप्त कारण दिखाए जाने पर विलंब को माफ करने की अनुमति देकर कुछ मामलों में निर्धारित अवधि के विस्तार को नियंत्रित करता है।

परिसीमा अधिनियम, 1963 की धारा 5, वादों को छोड़कर, किसी भी अपील या आवेदन के लिए निर्धारित अवधि बढ़ाने का कानूनी ढाँचा प्रदान करती है, बशर्ते आवेदक न्यायालय को संतुष्ट करता है कि विलंब के पर्याप्त कारण थे। संदर्भ के लिए धारा 5 का पाठ नीचे पुन: प्रस्तुत किया गया है:

> *5.* विहित काल का कतिपय दशाओं में विस्तारण *:-*
>
> कोई भी अपील या कोई भी आवेदन, जो सिविल प्रक्रिया संहिता, *1908 (1908* का *5)* के आदेश *XXI* के उपबंधों में से किसी के अधीन के आवेदन से भिन्न हो, विहित काल के पश्चात् ग्रहण किया जा सकेगा यदि अपीलार्थी या आवेदक, न्यायालय का यह समाधान कर दे कि उसके पास ऐसे काल के भीतर अपील या आवेदन न करने के लिए पर्याप्त हेतुक था।
>
> स्पष्टीकरण--यह तथ्य कि अपीलार्थी या आवेदक विहित काल का अभिनिश्चय या संगणना करने में उच्च न्यायालय के किसी आदेश, पद्धति या निर्णय के कारण भुलावे में पड़ गया था, इस धारा के अर्थ के भीतर पर्याप्त हेतुक हो सकेगा।

यह प्रावधान न्यायालयों को न्याय के हित में विलंब को क्षमा करने का अधिकार देता है, यह सुनिश्चित करते हुए कि तकनीकी खामियाँ न्याय प्रशासन में बाधा न डालें। वर्तमान मामले में, इस प्रावधान के तहत याचिकाकर्ता द्वारा विलंब के लिए दिए गए औचित्य की सावधानीपूर्वक जाँच की जानी चाहिए थी।

इस संदर्भ में, माननीय सर्वोच्च न्यायालय द्वारा **कलेक्टर, भूमि अधिग्रहण, अनंतनाग एवं अन्य बनाम एमएसटी. कातिजी एवं अन्य, *1987* एआईआर *1353*** में प्रतिपादित सिद्धांतों का उल्लेख करना प्रासंगिक है, जिसमें न्यायालय ने न्याय के व्यापक हितों को ध्यान में रखते हुए, विलंब क्षमा के मामलों में उदार दृष्टिकोण पर बल दिया था। इसके प्रासंगिक अनुच्छेद नीचे पुन: प्रस्तुत हैं –

विधायिका ने भारतीय परिसीमा अधिनियम, *1963* की धारा *51* को अधिनियमित करके विलंब को क्षमा करने की शक्ति प्रदान की है ताकि न्यायालय मामलों का 'गुण-दोष' के आधार पर निपटारा करके पक्षकारों के साथ पर्याप्त न्याय कर सकें। विधायिका द्वारा प्रयुक्त "पर्याप्त हेतुक" शब्द न्यायालयों को कानून को सार्थक ढंग से लागू करने में सक्षम बनाने के लिए पर्याप्त रूप से लचीला है जो न्याय के उद्देश्यों की पूर्ति करता है—जो कि न्यायालयों जैसी संस्था के अस्तित्व का मुख्य उद्देश्य है। यह सर्वविदित है कि यह न्यायालय अपने यहाँ संस्थित मामलों में उचित रूप से उदार दृष्टिकोण अपनाता रहा है। लेकिन ऐसा प्रतीत होता है कि यह संदेश पदानुक्रम में अन्य सभी न्यायालयों तक नहीं पहुँचा है। और ऐसा उदार दृष्टिकोण सिद्धांततः इसलिए अपनाया जाता है क्योंकि यह माना जाता है कि:-

"सिविल प्रक्रिया संहिता, *1908* के आदेश *XXI* के किसी भी प्रावधान के अंतर्गत आवेदन के अलावा कोई भी अपील या कोई भी आवेदन, निर्धारित अवधि के बाद स्वीकार किया जा सकता है, यदि अपीलकर्ता या आवेदक न्यायालय को यह संतुष्टि प्रदान कर दे कि उसके पास उक्त अवधि के भीतर अपील न करने या आवेदन न करने का पर्याप्त कारण था।"

*1.* सामान्यतः किसी वादी को देर से अपील दायर करने से कोई लाभ नहीं होता।

*2.* देरी को माफ़ करने से इनकार करने का परिणाम यह हो सकता है कि एक गुणकारी मामले को शुरुआत में ही बाहर कर दिया जाए और न्याय का उद्देश्य पराजित हो जाए। इसके विपरीत, जब देरी को माफ़ किया जाता है, तो अधिकतम यही हो सकता है कि पक्षकारों को सुनने के बाद मामले का निर्णय गुण-दोष के आधार पर किया जाए।

*3.* "प्रत्येक दिन की देरी का कारण बताना होगा"

इसका मतलब यह नहीं कि पांडित्यपूर्ण दृष्टिकोण अपनाया जाए। हर घंटे, हर सेकंड की देरी क्यों न हो? इस सिद्धांत को तर्कसंगत, सामान्य ज्ञान और व्यावहारिक तरीके से लागू किया जाना चाहिए।

*4.* जब पर्याप्त न्याय और तकनीकी विचार एक दूसरे के विरुद्ध खड़े किए जाते हैं, तो पर्याप्त न्याय के कारण को प्राथमिकता दी जानी चाहिए, क्योंकि दूसरा पक्ष गैर-जानबूझकर की गई देरी के कारण किए गए अन्याय में निहित अधिकार का दावा नहीं कर सकता है।

*5.* ऐसी कोई उपधारणा नहीं है कि देरी जानबूझकर, या दोषपूर्ण लापरवाही के कारण, या दुर्भावना के कारण हुई है। देरी करने से वादी को कोई लाभ नहीं होता। वास्तव में, वह गंभीर जोखिम उठाता है।

> *6.* यह समझना होगा कि न्यायपालिका का सम्मान तकनीकी आधार पर अन्याय को वैध बनाने की उसकी शक्ति के कारण नहीं, बल्कि इसलिए किया जाता है क्योंकि वह अन्याय को दूर करने में सक्षम है और उससे ऐसा करने की अपेक्षा की जाती है।

17. यह एक सुस्थापित कानूनी सिद्धांत है कि न्यायालयों का प्राथमिक कर्तव्य मामलों का उनके गुण-दोष के आधार पर निर्णय करना है, और यह सुनिश्चित करना है कि न्याय प्रक्रियागत तकनीकी बाधाओं से बाधित होने के बजाय, मूल रूप से प्रदान किया जाए। लैटिन कहावत फिएट जस्टिटिया रुआत सीलम *(fiat justitia ruat caelum)* - चाहे आसमान ही क्यों न गिर जाए, पर न्याय होना चाहिए - मूल न्याय के प्रति न्यायपालिका की प्रतिबद्धता को रेखांकित करती है। वर्तमान मामले में, विद्वान सत्र न्यायाधीश द्वारा विलंब क्षमा के प्रक्रियात्मक पहलू पर ध्यान केंद्रित करना, उठाए गए मूल मुद्दों की विस्तृत जाँच को नज़रअंदाज़ करना, एक खेदजनक चूक है। न्यायिक प्रक्रिया यह अनिवार्य करती है कि जब संज्ञान लेने वाले किसी आदेश की वैधता, शुद्धता और औचित्य को चुनौती दी जाती है, तो न्यायालय का यह दायित्व है कि वह मामले से जुड़े तथ्यों और परिस्थितियों की गहन जाँच करे। तकनीकी आधार पर, मूल गुणों को संबोधित किए बिना, एक औपचारिक बर्खास्तगी न केवल न्यायिक समीक्षा के उद्देश्य को कमजोर करती है बल्कि न्याय सुनिश्चित करने के मूल न्यायिक कार्य को भी नकारती है। विद्वान सत्र न्यायाधीश का दृष्टिकोण, मूल मुद्दों पर उचित ध्यान दिए बिना प्रक्रियात्मक देरी पर संकीर्ण रूप से ध्यान केंद्रित करना, प्राकृतिक न्याय के सिद्धांतों का उल्लंघन करता है और इसे स्वीकार नहीं किया जा सकता है। इस न्यायालय का यह सुविचारित दृष्टिकोण है कि एक

व्यावहारिक और न्यायसंगत दृष्टिकोण अपनाया जाना चाहिए था, जो प्रक्रियात्मक आवश्यकताओं को मूल न्याय प्रदान करने की व्यापक आवश्यकता के साथ संतुलित करता हो। उठाए गए तर्कों के विस्तृत और सावधानीपूर्वक परीक्षण के बिना, प्रक्रियात्मक आधार पर पुनरीक्षण याचिका को खारिज करना न्याय की विफलता है। तदनुसार, विद्वान सत्र न्यायाधीश का निर्णय जो मूल न्यायनिर्णयन की अनिवार्यता को नजरअंदाज करता है, कानून में टिकने योग्य नहीं है और इस चूक को सुधारने के लिए न्यायिक हस्तक्षेप की आवश्यकता है।

18. सत्र न्यायाधीश का आदेश अपने दृष्टिकोण में एक मौलिक त्रुटि को दर्शाता है। विलंब क्षमा के प्रक्रियात्मक पहलू पर संकीर्ण रूप से ध्यान केंद्रित करके और पुनरीक्षण याचिका को संक्षेप्तः खारिज करके, न्यायाधीश इस मूल मुद्दे को संबोधित करने में विफल रहे कि क्या विचारण न्यायालय ने अपराध का संज्ञान लेने में कोई गलती की थी। यह दृष्टिकोण प्राकृतिक न्याय के सिद्धांतों के विपरीत है, जिसके लिए निष्पक्ष सुनवाई और सभी प्रासंगिक मुद्दों की गहन जाँच आवश्यक है। तकनीकी पहलुओं को मूल न्याय से ज़्यादा प्राथमिकता देने का न्यायाधीश का निर्णय न केवल याचिकाकर्ता के निष्पक्ष सुनवाई के अधिकार को कमज़ोर करता है, बल्कि न्यायिक प्रक्रिया की अखंडता पर भी संदेह पैदा करता है। न्यायालयों के लिए प्रक्रियात्मक आवश्यकताओं और संबंधित पक्षों के मूल अधिकारों के बीच संतुलन बनाना अनिवार्य है। इस मामले में, याचिकाकर्ता के तर्कों का गुण-दोष पर विचार किए बिना, केवल विलंब के आधार पर पुनरीक्षण याचिका को खारिज करने का सत्र न्यायाधीश का निर्णय न्याय की विफलता के समान है।

19. परिसीमा अधिनियम, 1963 न्यायिक प्रक्रिया में अनुशासन स्थापित करने के एक मौलिक उद्देश्य की पूर्ति करता है, यह सुनिश्चित करते हुए कि न्याय का संतुलन बनाए रखने के लिए शिकायतों को एक उचित समय-सीमा के भीतर उठाया जाए। हालाँकि, इस वैधानिक परिसीमा का उद्देश्य पीड़ित पक्षों के लिए एक दुर्गम बाधा उत्पन्न करना नहीं है, बल्कि यह सुनिश्चित करना है कि मामले तब तक प्रस्तुत किए जाएँ जब तक साक्ष्य ताज़ा हों और न्याय प्रभावी ढंग से प्रदान किया जा सके। विलंब क्षमा के आवेदनों पर विचार करते समय उदार दृष्टिकोण अपनाना अनिवार्य है, विशेष रूप से उन परिस्थितियों में जहाँ प्रक्रियात्मक खामियों को पर्याप्त रूप से समझाया और उचित ठहराया गया हो। न्यायपालिका को परिसीमा कानूनों के पांडित्यपूर्ण या अति-तकनीकी अनुप्रयोग से बचना चाहिए, जैसा कि उक्ति "एक्टस क्यूरी नेमिनम ग्रेवबिट" (*actus curiae neminem gravabit*) में बल दिया गया है, जो यह प्रतिपादित करती है कि न्यायालय के किसी भी कार्य से किसी को भी क्षति नहीं हो। अतः, न्यायालयों को आदेश दिया जाता है कि वे एक व्यावहारिक दृष्टिकोण अपनाएँ, और केवल तकनीकी आधार पर मामलों को खारिज करने के बजाय न्याय के हितों के विरुद्ध विलंब के कारणों का मूल्यांकन करें। यह एक सुस्थापित न्यायिक सिद्धांत है कि प्रक्रियात्मक नियमों को न्याय की दासी के रूप में कार्य करना चाहिए, न कि उसकी स्वामिनी के रूप में। इसलिए, न्यायालयों का यह दायित्व है कि वे प्रक्रियात्मक तकनीकी पहलुओं की बजाय मामले के गुण-दोष को प्राथमिकता दें, जिससे निष्पक्ष सुनवाई के अधिकार की रक्षा हो और न्याय की विफलता को रोका जा सके।

20. विद्वान सत्र न्यायाधीश का दृष्टिकोण, जिसमें प्रक्रियागत तकनीकी पहलुओं पर अनुचित ज़ोर दिया गया है और मूल मुद्दों की अत्यंत उपेक्षा की गई है, क्षम्य नहीं है। इस न्यायालय का मानना है कि आक्षेपित आदेश में एक मौलिक त्रुटि है और इसे निरस्त किया जाना चाहिए। यह मामला विद्वान सत्र न्यायाधीश को वापस प्रेषित किया जाता है और उन्हें विशिष्ट निर्देश दिए जाते हैं कि वे याचिकाकर्ता के तर्कों के गुण-दोषों पर विचार करें और पुनरीक्षण याचिका पर कानून और न्याय के सिद्धांतों के अनुसार निर्णय लें।

21. उपरोक्त चर्चा के आलोक में, यह निष्कर्ष निकाला जाता है कि उच्च न्यायालय या सत्र न्यायालय बीएनएसएस की धारा 438 के अंतर्गत स्वप्रेरणा से भी अपनी पुनरीक्षण शक्तियों का प्रयोग कर सकता है। इस पर्यवेक्षी या निगरानी शक्ति का प्रयोग यह सुनिश्चित करने के लिए किया जाता है कि न्याय निष्पक्ष और कानून के अनुसार हो। इस शक्ति का प्रयोग केवल किसी पक्षकार के आवेदन पर निर्भर नहीं है; न्यायालय अधीनस्थ न्यायालयों द्वारा पारित आदेशों की वैधता, शुद्धता, या औचित्य की जांच करने के लिए अभिलेख मंगाकर स्वतः संज्ञान लेने के लिए भी सशक्त है। इसके अतिरिक्त, न्यायालय उन मामलों में भी स्वतः संज्ञान से अपनी पुनरीक्षण शक्ति का प्रयोग कर सकता है जहां किसी पक्षकार ने शुरू में आवेदन किया था, लेकिन आदेश को चुनौती देने में देरी कर दी। ऐसे मामलों में, न्यायालय किसी त्रुटिपूर्ण या अन्यायपूर्ण आदेश को सुधारने के लिए, दोष को ठीक करने और न्याय के सिद्धांतों को कायम रखने के लिए स्वतः संज्ञान से अपने पुनरीक्षण क्षेत्राधिकार का प्रयोग कर सकता है।

22. तदनुसार, तत्काल आपराधिक विविध याचिका स्वीकार की जाती है।

23. विद्वान सत्र न्यायाधीश, चित्तौड़गढ़ द्वारा आपराधिक पुनरीक्षण याचिका संख्या 64/2024 में पारित आदेश दिनांक 01.08.2024 को एतद्द्वारा निरस्त एवं अपास्त किया जाता है। आपराधिक पुनरीक्षण याचिका संख्या 64/2024 (66/2024) को उसके मूल क्रमांक पर बहाल करने हेतु मामला विद्वान सत्र न्यायाधीश को वापस प्रेषित किया जाता है। तत्पश्चात, अन्य पक्षों को नोटिस जारी किया जाए और पक्षकारों को सुनवाई का पर्याप्त अवसर प्रदान करने के पश्चात ही, वैधता, शुद्धता और औचित्य के परीक्षण के उद्देश्य से याचिका को नए सिरे से सुना और विचार किया जाए।

24. स्थगन याचिका का निस्तारण किया जाता है।

**(**फरजंद अली**),** जे

67-आशुतोष/-

**"अस्वीकरण- इस निर्णय का अनुवाद स्थानीय भाषा में किया जा रहा है, एवं इसका प्रयोग केवल पक्षकार इसको समझने के लिए उनकी भाषा में कर सकेगे एवं यह किसी अन्य प्रयोजन में काम नहीं ली जायेगी। सभी अधिकारिक एवं व्यवहारिक उद्देश्यों के लिए उक्त निर्णय का अंग्रेजी संस्करण ही विश्वसनीय माना जायेगा एवं निष्पादन एवं क्रियान्वयन में भी उसी को उपयोग में लिया जायेगा।"**



**Tarun Mehra**
**Advocate**